इन्द्रजीत बरुआ और अन्य

बनाम

भारत का निर्वाचन आयोग और अन्य

(30 सितम्बर, 1985)

(मुख्य न्यायमूर्ति पी० एन० भगवती, न्यायमूर्ति अमरेन्द्र नाथ सेन, वी० बालकृष्ण एराडी, रंगनाथ मिश्र और वी० खालिद)

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 (1950 का 43)—धारा 21(2) का परन्तुक [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 226 और 329(ख)]—निर्वाचक नामावलियों की विधिमान्यता—निर्वाचक नामावलियों के त्रुटिपूर्ण होने के आधार पर निर्वाचनों को चुनौती दिया जाना—यदि साधारण निर्वाचन या राज्य विधानमंडल के लिए निर्वाचन से पूर्व निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण नहीं किया जाता है और उनके आधार पर निर्वाचन आयोजित किया जाता है तो त्रुटिपूर्ण निर्वाचक नामावलियों के आधार पर निर्वाचन को चुनौती दी जाने वाली अर्जी कायम नहीं रखी जाएगी।

असम विधान सभा के समस्त 126 स्थानों के लिए फरवरी, 1983 में निर्वाचन आयोजित किया जाना अधिसूचित किया गया। इस कालावधि से पूर्व कुछ वर्षों से बड़ी उपद्रवकारी परिस्थितियां व्याप्त थीं। आन्दोलन के अनेक कारणों में से एक कारण लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 के अधीन तैयार की गई 1979 की निर्वाचक नामावलियों से संबंधित था। जब साधारण निर्वाचन अधिसूचित किया गया, तो गोहाटी उच्च न्यायालय में विभिन्न रिट अर्जियां फाइल की गई जिनमें राज्य में व्याप्त उपद्रवकारी स्थिति को देखते हुए निर्वाचन आयोजित किए जाने को स्थगित रखने और विधि के अनुसार नवीन निर्वाचक नामावलियां तैयार किए जाने के लिए परमादेश जारी किए जाने और आयोग तथा राज्य सरकार को त्रुटिपूर्ण नामावलियों के आधार पर निर्वाचन आयोजित किए जाने से अवरुद्ध किए जाने की प्रार्थना की गई। उच्च न्यायालय ने निर्वाचन का अंतरिम रोकादेश मंजूर नहीं किया। परिणामस्वरूप, राज्य विधानमण्डल के लिए निर्वाचन आयोजित किए गए और निर्वाचन के परिणाम सम्यक् रूप में अधिसूचित किए गए। तत्पश्चात्, गोहाटी उच्च न्यायालय

1985(9) eILR(PAT) SC

में कुछ-कुछ वैसे ही अभिकथनों के आधार पर विधानसभा के निर्वाचनों को चुनौती दी गई तथा साथ ही सदन भंग करने की प्रार्थना की गई। निर्वाचन आयोग की प्रेरणा पर इन रिट अर्जियों को निपटाए जाने के प्रयोजनार्थ उच्चतम न्यायालय में अंतरित कर दिया गया। अर्जीदारों ने यह दलील दी कि असम राज्य में भारत से बाहर के कुछ व्यक्ति घुसपैठ कर गए हैं और उनके नाम इन निर्वाचक नामावलियों में सम्मिलित कर लिए गए हैं। उच्चतम न्यायालय ने अर्जियां खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित—संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन राज्य विधान-मंडल के निर्वाचन को चुनौती देने वाली रिट अर्जियां कायम रखने योग्य नहीं हैं और निर्वाचन अर्जियां उच्च न्यायालय में लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 81 के अधीन फाइल की जानी चाहिए थीं। अधिनियम में विधानमंडल के निर्वाचन को पूर्ण रूप में चुनौती दिए जाने की बात अनुध्यात नहीं है और अधिनियम की स्कीम स्पष्ट है। प्रत्येक विजयी अभ्यर्थी के निर्वाचन को पृथक् निर्वाचन अर्जी फाइल करके चुनौती दी जानी चाहिए। अधिनियम के अधीन कार्यवाहियां सुनिश्चित हैं और इस बात के लिए स्पष्ट उपबंध किए गए हैं कि किस प्रकार निर्वाचन-अर्जी फाइल की जानी चाहिए और ऐसी निर्वाचन अर्जी के कौन पक्षकार होंगे। जब किसी विधानमंडल के लिए निर्वाचन आयोजित किया जाता है तो यह एक निर्वाचन नहीं होता अपितु जितने विधानमंडल के सदस्य होते हैं उतने ही निर्वाचन होते हैं। अतः, संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असम विधानसभा के निर्वाचनों को दी गई चुनौती विधि के अनुसार मान्य नहीं है। (पैरा 6)

निर्वाचन आयोग ने अधिनियम की धारा 16 की अपेक्षाओं के प्रतिकूल निदेश नहीं दिए और 1979 की निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण निर्वाचन आयोग के नियंत्रण से परे के कारणोंवश नहीं किया जा सकता। 1977 की निर्वाचक नामावली के प्रति कोई विवाद नहीं था और न ही इन नामावलियों के आधार पर राज्य विधानमंडल के लिए आयोजित 1978 के निर्वाचन के विरुद्ध किसी प्रकार की चुनौती दी गई थी। स्वीकृत रूप में 1979 की नामावलियां 1977 की नामावलियों के व्यापक पुनरीक्षण का परिणाम थीं। इस स्थिति के होते हुए और धारा 21 की उपधारा (2) के परन्तुक को देखते हुए, 1979 की निर्वाचक नामावलियां विधिमान्यतः अस्तित्व में थीं और प्रभावी रहीं यद्यपि उपधारा (2) में अनुध्यात पुनरीक्षण की प्रक्रिया न तो शुरू ही की गई और न ही पूरी हुई। निर्वाचक नामावलियों की तैयारी और पुनरीक्षण किसी विशेष निर्वाचन से संसक्त न होने वाली निरंतर प्रक्रिया है,

किन्तु जब निर्वाचन आयोजित किया जाता है, तो वह निर्वाचक नामावली, जो निर्वाचन अधिसूचित किए जाने के समय अस्तित्व में थी, ऐसे निर्वाचन को आयोजित किए जाने का आधार होगी। इसी कारण धारा 23 की उपधारा (3) में निर्वाचन के लिए नामांकन भरने की अंतिम तारीख के पश्चात् और निर्वाचन पूरा होने तक निर्वाचक नामावली में किसी भी प्रकार का उपांतरण निलंबित रखने का उपबंध है। अतः, 1979 की निर्वाचक नामावलियां अविधिमान्य नहीं थीं और 1983 में निर्वाचन आयोजित किए जाने का आधार हो सकती थीं। त्रुटिपूर्ण निर्वाचक नामावली के आधार पर किसी अभ्यर्थी के निर्वाचन को चुनौती नहीं दी जा सकती। विधानमंडल के लिए निर्वाचन आयोजित करने और उन्हें विधि के अनुसार आयोजित करने दोनों ही बातों का सर्वोपरि महत्व है। ऐसे निर्वाचनों का आयोजन भी संविधान और अधिनियम में अनुध्यात समयबद्ध कार्यक्रम के अनुसरण में किया जाना चाहिए। 1950 के अधिनियम की धारा 22(2) में जोड़ा गया परन्तुक ऐसी संभाव्य घटनाओं में निर्वाचक नामावलियों को बचाने के लिए आशयित है जो अन्यथा कार्यक्रम के निर्विघ्न रूप में संचालन में हस्तक्षेप करेगा। ये ऐसे कारण हैं जिनसे यह निष्कर्ष निकलता है कि 1979 की निर्वाचक नामावली दूषित नहीं थी और इसे अविधिमान्य मानकर चुनौती नहीं दी जा सकती। (पैरा 12)

न्यायालय समाधानप्रद रूप में इस बात की अवेक्षा करता है कि असम समझौता होने से आन्दोलन समाप्त हो गया प्रतीत होता है। निर्वाचन आयोग ने कार्य करना शुरू कर दिया है और अधिनियम तथा नियमों के उपबंधों का अनुपालन करते हुए, निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण किया जा रहा है। न्यायालय को यह आशा और विश्वास है कि निर्वाचन जो कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया के लिए अनिवार्य है, यावत-समीचीन रूप में विधि अनुसरण में और निर्वाचन आयोग द्वारा न्यायालय के समक्ष किए गए कथन के निबंधनों के अनुसार पुनरीक्षित निर्वाचक नामावली के आधार पर आयोजित किए जाएंगे। (पैरा 15)

अनुसरित निर्णय

पैरा

[1985] [1985] 4 उम० नि० प० 1206=ए० आई० आर० 1985 एस० सी० 1233 :
लक्ष्मी चरण सेन और अन्य बनाम ए० के० एम० हसन उज्जमन और अन्य 12

1985(9) eILR(PAT) SC

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[1957]	[1957] एस० सी० आर० 68 : मुख्य आयुक्त, अजमेर बनाम राधेश्याम दानी ;	9
[1955]	[1955] एस० सी० आर० 1104 : हरिविष्णु कामथ बनाम सैयद अहमद इशाक और अन्य ;	4
[1955]	[1955] एस० सी० आर० 267 : दुर्गा शंकर मेहता बनाम ठाकुर रघुराज सिंह और अन्य ;	5
[1954]	[1954] एस० सी० आर० 892 : जगन्नाथ बनाम जसवंत सिंह और अन्य ;	4
[1952]	[1952] एस० सी० आर० 218 : एन० पी० पुन्नुस्वामी बनाम रिटर्निंग आफिसर, नामक्कल निर्वाचन-क्षेत्र और अन्य	12

आरम्भिक अधिकारिता : 1984 का अन्तरित मामला संख्या 364-382.

संविधान के अनुच्छेद 139-क के अधीन की गई अर्जी।

अर्जीदारों की ओर से — सर्वश्री वी० एम० तारकुण्डे, पी० जी० बरूआ, एस० एन० मेधी, शांतिभूषण, के० के० वेणुगोपाल, सोली जे० सोरबजी, ऋषिकेश राय, श्रीमती और श्री करंजावला, के० पाबले, स्वराज कौशल, ई० सी० विद्यासागर, श्रीमती सुषमा स्वराज, सर्वश्री एन० एम० घटाटे, एस० वी० देशपाण्डे, लीरा गोस्वामी, श्रीमती आर० स्वामी, सर्वश्री सी० एस० वैद्यनाथन, पी० चौधरी, कुमारी लक्ष्मी आनन्द कुमार और कुमारी एन० रामकुमारन

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री के० पराशरन, के० जी० भगत, ए० के० सेन, एफ० एस० नारीमन, पी० आर० मृदुल, एस० एन० भुयां,

के० स्वामी, कुमारी ए० सुभाषिणी,
सर्वश्री एस० के० नन्दी, एम० जेड०
अहमद और कथ हजारिका

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र ने दिया।

न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र :

सुनवाई की समाप्ति पर, मामले की अत्यावश्यकता और इसमें अंतर्वलित विवाद्यकों को देखते हुए, हमने 28 सितम्बर, 1984 को अपने निष्कर्ष संक्षेप में उपवर्णित करते हुए एक आदेश किया और उसमें यह उपदर्शित किया था कि विस्तृत कारण निर्णय में दिए जायेंगे जिसे बाद में दिया जायेगा।

2. 12 जनवरी, 1983 को असम विधान सभा के समस्त 126 स्थानों के लिए फरवरी, 1983 को निर्वाचन आयोजित करने की बाबत अधिसूचना जारी की गई। इस कालावधि से पूर्व कुछ वर्षों से असम में बड़ी उपद्रवकारी परिस्थितियां विद्यमान थीं और इस आंदोलन के अनेक प्रश्नों में से एक प्रश्न 1979 की निर्वाचक नामावलियों से संबंधित था जिन्हें लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 (संक्षेप में "1950 का अधिनियम") के अधीन तैयार किया गया। जब साधारण निर्वाचन अधिसूचित किया गया, तो 1983 के सिविल नियम 87 और 228-246 के रूप में गोहाटी उच्च न्यायालय में विभिन्न रिट अर्जियां फाइल की गईं। प्रथम आवेदन में निर्वाचन आयोग और राष्ट्रपति शासन के अधीन राज्य सरकार से त्रुटिपूर्ण निर्वाचक नामावलियों के आधार पर निर्वाचन आयोजित न करने और राज्य में व्याप्त उपद्रवकारी स्थिति को देखते हुए निर्वाचनों का आयोजन स्थगित करने के लिए परमादेश की रिट जारी किये जाने हेतु प्रार्थना की गई। द्वितीय प्रकार की रिट अर्जियों में न्यायालय से निर्वाचन आयोजित किये जाने से पूर्व विधि के अनुसार नवीन निर्वाचक नामावलियां तैयार किये जाने और राज्य सरकार को त्रुटिपूर्ण और शून्य निर्वाचक नामावलियों के आधार पर निर्वाचन आयोजित करने से अवरुद्ध करने के लिए परमादेश की रिट जारी करने का निवेदन किया गया। उच्च न्यायालय ने निर्वाचन का अंतरिम रोकादेश मंजूर नहीं किया यद्यपि रिट अर्जियां ग्रहण कर ली गई थीं। परिणामस्वरूप, राज्य विधान-मण्डल के लिए निर्वाचन आयोजित किये गये और 27 फरवरी, 1983 की अधिसूचना द्वारा, निर्वाचन के परिणाम सम्यक् रूप में अधिसूचित किये गये। तत्पश्चात्, कुछ-कुछ वैसे ही अभिकथन करते हुए और मुख्यतः 1979 की निर्वाचक नामावलियों को चुनौती देते हुए विधान तथा सभा के समस्त निर्वाचनों

की विधिमान्यता को प्रश्नगत बनाते हुए और विधान सभा भंग करने की प्रार्थना करते हुए गोहाटी उच्च न्यायालय में अनेक रिट अर्जियां फाइल की गईं। इनमें से कुछ आवेदनों में नाम दिये गये, विजयी अभ्यर्थियों के विरुद्ध अधिकार-पृच्छा के अनुतोष की भी मांग की गई। इन रिट अर्जियों को 1983 के सिविल नियम 524, 691-693, 695-699, 706-707, 694 और 525 के रूप में अंकित किया गया और निर्वाचन आयोग की प्रेरणा पर इन्हें निपटाये जाने के लिए सम्यक् अनुक्रम में इस न्यायालय में अंतरित कर दिया गया। अतः, इन्हें अंतरित मामलों के रूप में नवीन क्रमांक दिया गया है। इस प्रकार हमारे समक्ष गोहाटी उच्च न्यायालय द्वारा अंतरित दो प्रकार के मामले हैं—प्रथम प्रवर्ग में 1979 की निर्वाचक नामावलियां और निर्वाचनों के आयोजन के लिए अधिसूचना तथा निर्वाचनों के रोकादेश के लिए निवेदन किया गया है और द्वितीय प्रवर्ग में इस आधार पर कि 1979 की शून्य निर्वाचक नामावलियों के आधार पर निर्वाचनों का आयोजन विधि के विरुद्ध था और इस कारण निर्वाचन दोषपूर्ण थे, निर्वाचन आयोजित और अधिसूचित किये जाने को चुनौती दी गई है।

3. हमारे 28 सितम्बर, 1984 के आदेश में न केवल निष्कर्ष ही उपदर्शित किये गये अपितु इसके संक्षिप्त कारण भी दिये गये थे। अतः, हम प्रत्येक उद्भूत होने वाले विचारणीय प्रश्न की बाबत इसके सुसंगत भागों को निर्दिष्ट करना चाहते हैं। इसमें असम विधान सभा के निर्वाचनों की विधिमान्यता को चुनौती देने की बात पर विचार करते हुए, हमने यह कहा—

> "वह मुख्य आधार, जिस पर निर्वाचनों की विधिमान्यता को चुनौती दी गई है, यह है कि लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 की धारा 21 की उपधारा 2(क) के उपबंधों के उल्लंघन में निर्वाचनों से पूर्व निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण नहीं किया गया और 1979 की निर्वाचक नामावलियों के आधार पर ही निर्वाचन आयोजित किये गये। अब यह बात निःसंदेह सत्य है कि आक्षेपित निर्वाचन आयोजित किये जाने से पूर्व निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण नहीं किया गया था अपितु निर्वाचन आयोग ने धारा 21 की उपधारा (2) के आरम्भिक भाग के अधीन तारीख 7 जनवरी, 1983 के आदेश द्वारा निर्वाचक नामावलियों के पुनरीक्षण से अभिमुक्ति ले ली और इस आदेश को किसी भी रिट अर्जी में चुनौती नहीं दी गई है। अतः, आक्षेपित निर्वाचनों को इस आधार पर कि वे निर्वाचक नामावलियों

का पुनरीक्षण किये बिना आयोजित किये गये थे, चुनौती नहीं दी जा सकती। अर्जीदारों ने 1979 की निर्वाचक नामावलियों की विधिमान्यता को इस आधार पर भी चुनौती दी कि निर्वाचन आयोग ने तारीख 18 सितम्बर, 1979 के प्रेस टिप्पण द्वारा यह गलत निदेश किया कि निर्वाचक नामावलियों के भारसाधक निर्वाचक प्राधिकारियों को किसी भी व्यक्ति का नाम निर्वाचक नामावलियों से नागरिकता की अर्हता न रखने के आधार पर नहीं हटाया जाना चाहिए चूंकि नागरिकता का प्रश्न ऐसा प्रश्न नहीं था जिसका विनिश्चय निर्वाचक प्राधिकारियों द्वारा किया जा सकता था और, इसलिए, 1979 की निर्वाचक नामावलियां अविधिमान्य थीं और 1979 की निर्वाचक नामावलियों के आधार पर आयोजित आक्षेपित निर्वाचन शून्य थे। हमारी समझ में इस दलील में कोई सार नहीं है।

प्रथमतः, संविधान का अनुच्छेद 329(ख) अनुच्छेद 226 के अधीन रिट अर्जी द्वारा ही नहीं अपितु इस आधार पर भी कि वे निर्वाचक नामावलियां, जिनके आधार पर आक्षेपित निर्वाचन आयोजित किये गये अविधिमान्य थीं, आक्षेपित निर्वाचनों को किसी भी रूप में चुनौती दिये जाने का वर्जन करता है। अर्जीदारों ने यह दलील देते हुए, कि वे संपूर्ण रूप में आक्षेपित निर्वाचनों को चुनौती दे रहे हैं न कि किसी व्यैक्तिक निर्वाचन को और अतः यह कि अनुच्छेद 329(ख) का वर्जन उनके द्वारा आक्षेपित निर्वाचनों को चुनौती दिये जाने के लिए फाइल की गई रिट अर्जियों के मार्ग में बाधक नहीं है, अनुच्छेद 329(ख) के वर्जन से बचने की ईप्सा की। किंतु हमारी समझ में पक्षकार इस बच निकलने के मार्ग का सहारा नहीं ले सकते। लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में पूर्ण रूप में निर्वाचनों की संकल्पना नहीं है। जो इस अधिनियम में अनुध्यात है वह प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र के लिए निर्वाचन है और केवल इसी निर्वाचन को निर्वाचन अर्जी फाइल करके चुनौती दी जा सकती है। यह हो सकता है कि ऐसा सामान्य आधार हो जो सभी निर्वाचन क्षेत्रों के निर्वाचनों को दूषित करता हो, किंतु फिर भी प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र के निर्वाचन को चुनौती दी जा सकती है चाहे चुनौती का आधार समरूप ही क्यों न हो। चाहे प्ररूप में चुनौती पूर्ण रूप में निर्वाचनों को ही क्यों न दी गई हो, प्रभाव में और सारतः, जिसे चुनौती दी गई है, वह प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र के लिए

1985(9) eILR(PAT) SC 1

निर्वाचन है और, इसलिए, अनुच्छेद 329(ख) को अवश्य लागू किया गया माना जाना चाहिए।

हमारा यह विचार है कि एक बार जब निर्वाचक नामावलियां अंतिम रूप में प्रकाशित कर दी जायें और इन निर्वाचक नामावलियों के आधार पर निर्वाचन आयोजित कर दिये जायें, तो किसी को भी किसी निर्वाचन क्षेत्र या निर्वाचन क्षेत्रों के निर्वाचनों को इस आधार पर चुनौती देने का अधिकार नहीं है कि निर्वाचक नामावलियां त्रुटिपूर्ण थीं। यह आधार लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 100 के अधीन किसी निर्वाचन को चुनौती देने के लिए उपलब्ध नहीं है। निर्वाचक नामावलियों की अंतिमता को ऐसी निर्वाचक नामावली के आधार पर आयोजित किये गये किसी निर्वाचक की विधिमान्यता को चुनौती दिये जाने के संबंध में की गई कार्यवाही में आक्षेपित नहीं किया जा सकता (देखिए कबूल सिंह **बनाम** कुन्दन सिंह वाला मामला ([1970] 1 एस० सी० आर० 845)। हमारी राय में, अनुच्छेद 329(ख) ऐसी किसी भी रिट अर्जी का स्पष्ट रूप में वर्जन करता है जो आक्षेपित निर्वाचन को इस आधार पर चुनौती देने के लिए फाइल की गई है कि 1979 की निर्वाचक नामावलियां, जिनके आधार पर आक्षेपित निर्वाचन आयोजित किये गये, अविधिमान्य थीं।"

संविधान के अनुच्छेद 329 (ख) में यह उपबंधित है—

"इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी,—

(क)...

(ख) संसद् के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधानमण्डल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए कोई निर्वाचन ऐसी निर्वाचन अर्जी पर ही प्रश्नगत किया जायेगा, अन्यथा नहीं जो ऐसे प्राधिकारी को और ऐसी रीति से प्रस्तुत की गई है जिसका समुचित विधानमण्डल द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन उपबंध किया जाए।"

4. अतः, किसी भी निर्वाचन को लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 द्वारा विहित रीति में ही निर्वाचन अर्जी फाइल करके चुनौती दी जा सकती है। इस न्यायालय की संविधान न्यायपीठ ने **जगन्नाथ** बनाम **जसवंत सिंह और अन्य**[1]

---

[1] [1954] एस० सी० आर० 892.

वाले मामले में यह मत व्यक्त किया—

"यह सामान्य नियम सुस्थिर है कि निर्वाचन विधि की कानूनी अपेक्षा का नियमनिष्ठ रूप में अनुपालन अवश्य किया जाना चाहिए और यह कि निर्वाचन लड़ा जाना विधि में निर्वाचन या साम्या में वाद नहीं है अपितु कामन लॉ में अज्ञात विशुद्धत: कानूनी कार्यवाही है और यह कि न्यायालय को कोई भी कामन लॉ शक्ति प्राप्त नहीं है।"

हरि विष्णु कामथ बनाम **सैयद अहमद इशाक और अन्य**[1] वाले मामले में न्या० वेंकटराम अय्यर ने न्यायालय की ओर से निर्णय सुनाते हुए यह मत व्यक्त किया—

"......ये किसी निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाली आरम्भिक कार्यवाहियों की नजीरें हैं, और अनुच्छेद 329(ख) में अधिनियमित प्रतिषेध के अंतर्गत होंगी। किंतु जब एक बार निर्वाचन अर्जी प्रस्तुत करके अनुच्छेद 329(ख) के अनुसरण में कार्यवाही संस्थित कर दी जाती है, तो इस अनुच्छेद की अपेक्षाएं पूर्णतया पूरी हो जाती हैं। तत्पश्चात्, जब निर्वाचन अर्जी पर किसी अधिकरण (अब उच्च न्यायालय) द्वारा सम्यक् अनुक्रम में सुनवाई करके इसका विनिश्चय कर दिया जाता है, तो इस बात का अवधारण कि क्या इसके विनिश्चय को चुनौती दी जा सकती है, और यदि दी जा सकती है, तो किस हद तक और किस रूप में, अधिकरणों के विनिश्चयों को लागू होने वाली सामान्य विधि द्वारा किया जाना चाहिए......इस विचार को कि अनुच्छेद 329(ख) अपने प्रवर्तन में किसी निर्वाचन को अपास्त करने के लिए कार्यवाही प्रारम्भ किये जाने तक ही परिसीमित है, न कि अधिकरण के विनिश्चय के पश्चात्वर्ती आगे के प्रक्रमों को, काफी हद तक बल प्राप्त होता है, जब इस प्रश्न पर किसी ऐसे अभ्यर्थी के संदर्भ में विचार किया जाता है जिसका निर्वाचन अधिकरण द्वारा अपास्त कर दिया गया हो।"

5. इसी प्रकार के मत **दुर्गा शंकर मेहता** बनाम **ठाकुर रघुराज सिंह और अन्य**[2] वाले मामले में एक अन्य संविधान न्यायपीठ द्वारा व्यक्त किये गये। न्यायालय की ओर से न्या० मुखर्जी ने (जो उस समय थे) यह विचार

---

[1] [1955] एस० सी० आर० 1104.

[2] [1955] एस० सी० आर० 267.

व्यक्त किया—

> "अध्यारोही खण्ड जिससे संविधान का अनुच्छेद 329 प्रारम्भ होता है और जिस पर प्रत्यर्थी के काउन्सेल ने बहुत जोर दिया, हमें भी उसी प्रकार संसद् या राज्य के विधानमंडल के किसी निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाले वाद या कार्यवाही को ग्रहण करने से विवर्जित करता है जिस प्रकार कि यह देश के किसी अन्य न्यायालय को। निर्वाचन अधिकरण (अब उच्च न्यायालय) ही इस प्रकार के विवादों का विनिश्चय कर सकता है, और कार्यवाही निर्वाचन अर्जी द्वारा ही प्रारम्भ और उसी रीति से की जानी चाहिए जो किसी कानून द्वारा उपबंधित है······।"

6. ये स्पष्ट नजरें—और इस स्थिति को कभी भी चुनौती नहीं दी गई है—इस बात का समर्थन करती हैं कि किसी निर्वाचन को केवल अधिनियम द्वारा विहित रीति में ही चुनौती दी जा सकती है। मामले को इस रूप में देखते हुए, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन राज्य विधानमण्डल के निर्वाचन को चुनौती देने वाली रिट अर्जियां कायम रखने योग्य नहीं हैं और अधिनियम की धारा 81 के अधीन निर्वाचन अर्जियां उच्च न्यायालय में फाइल की जानी चाहिए थीं। अधिनियम में विधानमण्डल के निर्वाचन को पूर्ण रूप में चुनौती दिये जाने की बात अनुध्यात नहीं है और अधिनियम की स्कीम स्पष्ट है। प्रत्येक विजयी अभ्यर्थी के निर्वाचन को पृथक निर्वाचन अर्जी फाइल करके चुनौती दी जानी चाहिए। अधिनियम के अधीन कार्यवाहियां सुनिश्चित हैं और इस बात के लिए स्पष्ट उपबंध किये गये हैं कि किस प्रकार निर्वाचन अर्जी फाइल की जानी चाहिए और ऐसी निर्वाचन अर्जी के कौन पक्षकार होंगे। जैसा कि हम पहले ही यह मत व्यक्त कर चुके हैं कि जब किसी विधानमण्डल के लिए निर्वाचन आयोजित किया जाता है तो यह एक निर्वाचन नहीं होता अपितु जितने विधानमंडल के सदस्य होते हैं उतने ही निर्वाचन होते हैं। अतः, संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असम विधान सभा के निर्वाचनों को चुनौती विधि में मान्य नहीं है।

7. हमारे समक्ष पक्षकारों का स्वीकृत पक्षकथन यह है कि सभी निर्वाचन क्षेत्रों की निर्वाचक नामावलियां असम राज्य के सिवाय 1979 वर्ष में 1 जनवरी, 1979 को अर्हक तारीख मानते हुए व्यापक रूप में विगत में ही पुनरक्षित की गई। निर्वाचन क्षेत्र संख्या 114-जोनइ (अनुसूचित जनजाति) सभा क्षेत्र की बाबत केवल संक्षिप्त पुनरीक्षण किया गया चूंकि व्यापक पुनरीक्षण

इस कारण संभव नहीं हो सका कि ये क्षेत्र सुसंगत समय अत्यधिक रूप में बाढ़ में निमग्न थे। संसद् की लोक सभा हेतु साधारण निर्वाचन 1980 में उक्त निर्वाचक नामावलियों के आधार पर हुआ। विधि की अपेक्षा तथा देश के शेष भाग में विद्यमान पद्धति के अनुसार निर्वाचक नामावलियों का वार्षिक पुनरीक्षण 1980-81 या 1982 में राज्य में व्याप्त प्रतिकूल विधि व्यवस्था की स्थिति के कारण न हो सका।

8. असम राज्य की विधान सभा राष्ट्रपति द्वारा संविधान के अनुच्छेद 356 के अधीन कार्रवाई करते हुए तारीख 19 मार्च, 1982 की उद्घोषणा द्वारा भंग कर दी गई और विस्तारित कालावधि 18 मार्च, 1983 को समाप्त होने वाली थी। निर्वाचन आयोग को संघ सरकार द्वारा 6 जनवरी, 1983 को यह सूचित किया गया कि राष्ट्रपति की उद्घोषणा का फरवरी, 1983 के अंत तक प्रतिसंहरण कर लिया जाएगा। अतः, असम में विधान सभा गठित करने के लिए उस कालावधि से पूर्व निर्वाचन आयोजित करना तत्काल आवश्यक हो गया। प्रक्रिया को पूरा करने के लिए निर्वाचन आयोग के पास मुश्किल से आठ सप्ताह का समय था। आगे समय खराब किए बिना, आयोग ने 12 जनवरी, 1983 को निर्वाचन कार्यक्रम की घोषणा करते हुए अधिसूचना जारी की और 1979 की विद्यमान निर्वाचक नामावलियों के आधार पर निर्वाचन आयोजित किया जाना प्रस्तावित किया।

9. अर्जीदारों के अनुसार 1979 की निर्वाचक नामावलियां चूंकि समुचित रूप से पुनरीक्षित न होने से उचित नामावलियां नहीं थीं जिनके आधार पर निर्वाचन आयोजित किया जा सकता, जैसा कि विधि द्वारा अपेक्षित है। यह संकेत किया गया कि पुनरीक्षण की प्रक्रिया प्रारंभ कर दी गई थी किन्तु निर्वाचन आयोग ने सहसा ही इसे रोक लिया और यह विनिश्चय किया कि अपुनरीक्षित और पुरानी नामावलियों के आधार पर ही निर्वाचनों का आयोजन किया जाएगा। अर्जीदारों ने **मुख्य आयुक्त, अजमेर** बनाम **राधेश्याम दानी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय के आधार पर यह निवेदन किया कि लोकतांत्रिक निर्वाचनों के लिए यह आवश्यक है कि निर्वाचक नामावलियां उचित रूप में रखी जाएं और इस कारण कि वे उपलब्ध हो सकें, यह आवश्यक है कि निर्वाचक नामावलियां तैयार किए जाने के पश्चात् संबंधित पक्षकारों को इस बात की संवीक्षा करने के लिए अवसर प्रदान किया जाए कि क्या नामावली गत निर्वाचक अपेक्षित अर्हताएं रखते हैं। निर्वाचक

[1] [1957] एस० सी० आर० 68.

1985(9) eILR(PAT) SC 1

नामावलियों के पुनरीक्षण तथा नामावलीगत किए जाने के लिए किए गए दावों के न्यायनिर्णयन हेतु भी अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। जब तक ऐसा न किया जाए निर्वाचन आयोजित करने वाले व्यक्तियों की बाध्यता का निर्वहन नहीं होता और इस प्रकार अपूर्ण निर्वाचक नामावलियों के आधार पर आयोजित निर्वाचनों की कोई पवित्रता नहीं रह जाती और इन्हें संबंधित पक्षकारों की प्रेरणा पर चुनौती दी जा सकेगी। ऊपर निर्दिष्ट मामले में, नगरपालिका निर्वाचनों की विधिमान्यता पर विचार किया गया। स्पष्टतया, संविधान के अनुच्छेद 329(ख) के उपबंध इस प्रकार के निर्वाचन को लागू नहीं होते और इस न्यायालय ने निर्वाचन आयोजित करने के लिए कानूनी अपेक्षाओं पर विचार किया।

10. 1979 की निर्वाचक नामावलियों को चुनौती इस आधार पर दी गई कि वे व्यक्ति भी, जो भारत के नागरिक नहीं हैं, निर्वाचक नामावलियों में सम्मिलित कर लिये गये हैं। भारत से बाहर के व्यक्तियों की असम में घुसपैठ और निर्वाचक नामावलियों में उनके नामों का सम्मिलित किया जाना असम आन्दोलन के मुख्य कारणों में से एक कारण था। 1950 के अधिनियम की धारा 16 में स्पष्ट रूप से यह उपबंधित है कि ऐसा व्यक्ति, जो भारत का नागरिक नहीं है, निर्वाचक नामावली में रजिस्ट्रीकरण के लिए निर्रहित होगा। निर्वाचक रजिस्ट्रीकरण नियम में एक निर्रहित व्यक्ति का नाम सम्मिलित किये जाने पर आक्षेप करने की बाबत विस्तृत उपबंध किये गये हैं। 1950 के अधिनियम के भाग 3 में सभा निर्वाचन क्षेत्रों की निर्वाचक नामावलियों के उपबंध किये गये हैं। धारा 21 में निर्वाचक नामावलियों की तैयारी और पुनरीक्षण का उल्लेख है। धारा 22 में निर्वाचक नामावलियों की प्रविष्टियों के सही किये जाने की बाबत उपबंध है जबकि धारा 23 निर्वाचक नामावलियों में नाम सम्मिलित किये जाने के लिए प्राधिकृत करती है। धारा 24 में धारा 22 और 23 के अधीन निर्वाचक नामावलियों में नाम सम्मिलित करने आदि की बाबत निर्वाचक रजिस्ट्रीकरण आफिसर द्वारा किये गये किसी आदेश के विरुद्ध मुख्य निर्वाचक आफिसर के समक्ष अपील का उपबंध है। धारा 21, जिसमें निर्वाचक नामावलियों की तैयारी और पुनरीक्षण की बाबत उपबंध है, इस प्रकार है—

> "(1) हर एक निर्वाचन-क्षेत्र के लिए निर्वाचक नामावली अर्हता की तारीख के प्रति निर्देश से और विहित रीति में तैयार की जाएगी और इस अधिनियम के अधीन बनाये गये नियमों के अनुसार अपने अन्तिम प्रकाशन पर तुरन्त प्रवृत्त हो जायेगी।

(2) उक्त निर्वाचक नामावली का—

(क) विहित रीति में पुनरीक्षण तब के सिवाय जबकि उन कारणों से, जो लेखन द्वारा अभिलिखित किये जाएंगे, निर्वाचन आयोग अन्यथा निदेश दे—

(i) लोक सभा या किसी राज्य की विधान सभा के हर एक साधारण निर्वाचन से पहले, तथा

(ii) निर्वाचन क्षेत्र को आबंटित स्थान में आकस्मिक रिक्ति भरने के लिए हर एक उप-निर्वाचन से पहले,

अर्हता की तारीख के प्रति निदेश से किया जायेगा, तथा

(ख) विहित रीति में किसी वर्ष में पुनरीक्षण अर्हता की तारीख के प्रति निदेश से किया जायेगा यदि ऐसा पुनरीक्षण निर्वाचन आयोग द्वारा निर्दिष्ट किया गया है :

परन्तु यदि निर्वाचक नामावली का यथापूर्वोक्त पुनरीक्षण न किया गया हो तो उससे उक्त निर्वाचक नामावली की विधिमान्यता या निरन्तर प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं पड़ेगा।

(3) × × ×"

अतः, परन्तुक से यह बात निःसंदेह स्पष्ट हो जाती है कि यदि किसी कारणवश उपधारा (2) द्वारा अपेक्षित रूप में निर्वाचक नामावली का पुनरीक्षण नहीं किया जाता, तो इससे उक्त निर्वाचक नामावली की विधिमान्यता या निरन्तर प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं पड़ेगा।

11. 1979 की निर्वाचक नामावलियों की विधिमान्यता की बाबत विचार करते हुए, हमने यह उपदर्शित किया—

"हम यह भी स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हमारी राय में 1979 की निर्वाचक नामावलियों को अविधिमान्य घोषित नहीं किया जा सकता। निर्वाचन आयोग के सचिव, श्री गणेशन और श्री अशोक कुमार अरोड़ा, अपर मुख्य निर्वाचक आफिसर, असम के प्रति-शपथपत्रों से यह बात स्पष्ट रूप में प्रकट है कि निर्वाचक नामावलियों के पुनरीक्षण हेतु लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 द्वारा विहित प्रक्रिया का अनुसरण किया गया था। 18 सितम्बर, 1979 के प्रेस टिप्पण का

वाचन जिसका अर्जीदारों की ओर से अत्यधिक अवलंब लिया गया प्रेस टिप्पण जारी किये जाने से पूर्व मुख्य निर्वाचक आफिसर, असम और सचिव, निर्वाचन आयोग के मध्य हुए पत्राचार के साथ किया जाना चाहिए और यदि इन समस्त दस्तावेजों का वाचन एक साथ किया जाये, तो यह स्पष्ट है कि यदि निर्वाचक नामावलियों से प्रारूप की किसी विशिष्ट प्रविष्टि के प्रति आक्षेप किया गया, तो नागरिकता के प्रश्न का विनिश्चय न करने की बाबत निर्वाचन आयोग द्वारा मुख्य निर्वाचक आफिसर को कोई भी अनुदेश जारी नहीं किये गये। निर्वाचन आयोग ने केवल इस आधार पर कार्यवाही करने के लिए ही मुख्य निर्वाचक आफिसर को निदेश दिया कि वे लोग जिनके नाम पूर्व निर्वाचक नामावलियों में पहले ही सम्मिलित कर लिये गये थे—और हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि 1977 की निर्वाचक नामावलियों को जिनके आधार पर असम विधान सभा के निर्वाचक 1978 में आयोजित किये गये किसी भी समय किसी भी अर्जीदार ने चुनौती नहीं दी— उन्हें प्रथमदृष्टया नागरिकता की अर्हता पूरा किया हुआ समझा जाना चाहिए और यदि नागरिकता की अर्हता न रखने के आधार पर किसी विशेष व्यक्ति का नाम सम्मिलित किये जाने की बाबत किसी प्रकार का विनिर्दिष्ट आक्षेप किया जाता है, तो इसका विनिश्चय समुचित निर्वाचक प्राधिकारियों द्वारा किया जाना चाहिए और यह दर्शित करने का भार कि वह व्यक्ति नागरिक नहीं है, आक्षेपकर्ता पर होगा। हमें यह जानकारी दी गई और शपथपत्रों से भी यह बात दर्शित होती है कि वास्तव में निर्वाचक नामावलियों के प्रारूप के प्रकाशन के पश्चात् नागरिकता की अर्हता न रखने के आधार पर किये गये अनेकों आक्षेपों को समुचित निर्वाचक प्राधिकारियों द्वारा निपटा दिया गया। जहां तक निर्वाचक नामावलियों के प्रारूप में किसी नये नाम को सम्मिलित किये जाने का संबंध है, निर्वाचन आयोग ने यह निदेश किया कि यह सुनिश्चित करने की बाबत अत्यधिक सतर्कता बरती जाये कि केवल नागरिकों को ही निर्वाचक के रूप में नामावलीगत किया जाय। हम यह नहीं समझते कि इनसे लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 और इस अधिनियम के अधीन बनाये गये निर्वाचक रजिस्ट्रीकरण नियम, 1960 के उपबंधों की किसी प्रकार अवहेलना हुई। अतः, 1979 की निर्वाचक नामावलियों को किसी विधिक निःशक्तता से दोषपूर्ण नहीं समझा जाना चाहिए और हम यह बात एक बार पुनः

1985(9) eILR(PAT) SC 1

दोहरा देना चाहते हैं कि भले ही 1979 की निर्वाचक नामावलियां अविधिमान्य थीं, इससे आक्षेपित निर्वाचनों की विधिमान्यता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा और न ही संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन आक्षेपित निर्वाचन को चुनौती देने के लिए कोई रिट अर्जी कायम रखी जायेगी।"

12. पक्षकारों और निर्वाचन आयोग द्वारा हमारे समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री के आधार पर, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि निर्वाचन आयोग ने अधिनियम की धारा 16 की अपेक्षाओं के प्रति मूल निदेश नहीं दिये और 1979 की निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण निर्वाचन आयोग के नियंत्रण से परे के कारणवश नहीं किया जा सका। जैसा कि हम अपने 28 सितम्बर, 1984 के आदेश में संकेत कर चुके हैं, 1977 की निर्वाचक नामावली के प्रति कोई विवाद नहीं था और न ही इन नामावलियों के आधार पर राज्य विधान-मण्डल के लिए आयोजित 1978 के निर्वाचन के विरुद्ध किसी प्रकार की चुनौती दी गई थी। स्वीकृत रूप में, 1979 की नामावलियां 1977 की नामावलियों के व्यापक पुनरीक्षण का परिणाम थीं। इस स्थिति के होते हुए और धारा 21 की उपधारा (2) के परन्तुक को देखते हुए जिसे हमने ऊपर उद्धृत किया है, 1979 की निर्वाचक नामावलियां विधिमान्यतः अस्तित्व में थीं और प्रभावी रहीं यद्यपि उपधारा (2) में अनुध्यात पुनरीक्षण की प्रक्रिया न तो शुरू ही की गई और न ही पूरी हुई। इस न्यायालय के संविधान न्यायपीठ के विनिश्चय द्वारा **लक्ष्मी चरण सेन और अन्य** बनाम **ए० के० एम० हसन उज्जमन और अन्य**[1] वाले मामले में यह उपदर्शित किया गया कि निर्वाचक नामावलियों की तैयारी और पुनरीक्षण किसी विशेष निर्वाचन से संसक्त न होने वाली निरंतर प्रक्रिया है, किन्तु जब निर्वाचन आयोजित किया जाता है, तो वह निर्वाचक नामावली जो निर्वाचन अधिसूचित किये जाने के समय अस्तित्व में थी, ऐसे निर्वाचन को आयोजित किये जाने का आधार होगी। इसी कारण धारा 23 की उपधारा (3) में निर्वाचन के लिए नामांकन भरने की अंतिम तारीख के पश्चात् और निर्वाचन पूरा होने तक निर्वाचक नामावली में किसी भी प्रकार का उपांतरण निलंबित रखने का उपबंध है। अतः, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि 1979 की निर्वाचक नामवलियां अविधिमान्य नहीं थीं और 1983 में निर्वाचन आयोजित किये जाने का आधार हो सकती थीं। क्या निर्वाचक नामावलियों की तैयारी और प्रकाशन संविधान के अनुच्छेद 329(ख)

---

[1] [1985] 4 उम० नि० प० 1206=ए० आई० आर० 1985 एस० सी० 1233 सिविल अपीलें 739-741/82 जिनका विनिश्चय 8 मई, 1985 को किया गया।

1985(9) eILR(PAT) SC 1

के अर्थान्तर्गत निर्वाचन प्रक्रिया का एक भाग है अगला विचारणीय पहलू है। इस न्यायालय ने **एन० पी० पुन्नुस्वामी** बनाम **रिटर्निंग आफिसर, नामक्कल निर्वाचन-क्षेत्र और अन्य**[1] वाले मामले में "निर्वाचन" शब्द की परिधि का विनिश्चय किया। न्यायमूर्ति फज़ल अली ने संविधान न्यायपीठ की ओर से निर्णय सुनाते हुए यह उपदर्शित किया—

> "मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि 'निर्वाचन' शब्द का प्रयोग संविधान के भाग 15 में व्यापक रूप में किया गया है, अर्थात्, विधान-मण्डल के लिए विजय प्राप्त करने के लिए अभ्यर्थी को जिस प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है उस समस्त प्रक्रिया को यह द्योतित करता है। संविधान के अनुच्छेद 324 में 'निर्वाचनों का संचालन' अभिव्यक्ति का प्रयोग विनिर्दिष्टतः व्यापक अर्थ को स्पष्ट करता है और उसी अर्थ को संविधान के उन अन्य उपबंधों के संगत रूप में लिया जा सकता है जो अनुच्छेद 329(ख) को सम्मिलित करते हुए संविधान के भाग 15 में देखने को मिलते हैं। यह बात कि इस 'निर्वाचन' शब्द का अर्थ लोकतांत्रिक देश में अति व्यापक है इस तथ्य से स्पष्ट हो जाती है कि इस विषय से संबंधित पुस्तकों और इस बात से संबंधित अनेकों मामलों में जो प्रश्न चर्चा का विषय होता है, वह निर्वाचन प्रारम्भ होने से संबंधित है। इस विषय के संबंध में हेल्सबरी "लॉ आफ इंगलैंड" नामक पुस्तक में कृत 'निर्वाचन का प्रारम्भ' शीर्षाधीन संक्षिप्त रूप में उल्लेख प्राप्त होता है जिसे निम्न प्रकार उद्धृत किया जा सकता है—
>
> यद्यपि प्रत्येक निर्वाचन का प्रथम औपचारिक कदम रिट का जारी किया जाना है, किंतु फिर भी निर्वाचन कतिपय प्रयोजनार्थ पूर्ववर्ती तारीख से प्रारम्भ समझा जाता है। प्रत्येक मामले में यह तथ्य का प्रश्न है कि जब निर्वाचन इस प्रकार प्रारम्भ माना जाये कि संबंधित दल निर्वाचन विधि के भंग के उत्तरदायी माने जायें, तो कसौटी यह होनी चाहिए कि क्या निर्वाचन लड़ा जाना "युक्तियुक्त रूप में अवश्यम्भावी" है। न तो रिट जारी किया जाना और न ही निर्वाचन की सूचना का प्रकाशित किया जाना उस तारीख को नियत किया जाना नहीं समझा जा सकता जब इस दृष्टिकोण से निर्वाचन शुरू होता है। और न ही नामांकन भरे जाने की तारीख इसका आधार हो सकती। प्रायः निर्वाचन रिट जारी करने से पहले शुरू हो

[1] [1952] एस० सी० आर० 218.

जाता है। यह प्रश्न कि निर्वाचन कब शुरू होता है इस बात से सावधानीपूर्वक अलग समझा जाना चाहिए कि किसी निर्वाचन "का संचालन और व्यवस्था" कब शुरू बताई गई। तथापि, यह प्रश्न कि किस समय कोई व्यक्ति विशेष अभ्यर्थी समझा जाये प्रत्येक मामले में भिन्न रूप में समझा जाना चाहिए।

इस अवतरण के विवेचन से यह बात स्पष्ट है कि "निर्वाचन" शब्द का प्रयोग उस समस्त प्रक्रिया के संदर्भ में किया जा सकता है और समुचित रूप में किया गया है जिसमें कई प्रक्रम और अनेकों कदम आते हैं, जिनमें से कुछ का प्रक्रिया के परिणाम से महत्वपूर्ण संबंध होता है।"

हम इस बात को मानने को तैयार नहीं हैं कि निर्वाचक नामावलियों की तैयारी भी निर्वाचन प्रक्रिया है। हमारे इस मत को उपर्युक्त **लक्ष्मी चरण सेन**[1] वाले मामले में मुख्य न्यायमूर्ति चन्द्रचूड़ द्वारा व्यक्त किये गये इस मत से भी समर्थन प्राप्त होता है कि "इस विचार के संगत रूप में, यह अभिनिर्धारित करना कठिन है कि निर्वाचक नामावली की तैयारी और पुनरीक्षण अनुच्छेद 329(ख) के अर्थान्तर्गत 'निर्वाचन' का भाग है।" किसी उपयुक्त मामले में विधि की अपेक्षाओं का अनुपालन न किये जाने के लिए उपर्युक्त **पुन्नुस्वामी**[2] वाले मामले में उपदर्शित नियम के अध्यधीन निर्वाचक नामावली को चुनौती दी जा सकती है। किंतु त्रुटिपूर्ण निर्वाचक नामावली के आधार पर किसी अभ्यर्थी के निर्वाचन को चुनौती नहीं दी जा सकती। विधानमण्डल के लिए निर्वाचन आयोजित करने और उन्हें विधि के अनुसार आयोजित करने दोनों ही बातों का सर्वोपरि महत्व है। ऐसे निर्वाचनों का आयोजन भी संविधान और अधिनियम में अनुध्यात समयबद्ध कार्यक्रम के अनुसरण में किया जाना चाहिए। 1950 के अधिनियम की धारा 22(2) में जोड़ा गया परन्तुक ऐसी सम्भाव्य घटनाओं में निर्वाचक नामावलियों को बचाने के लिए आशयित है जो अन्यथा कार्यक्रम के निर्विघ्न रूप में संचालन में हस्तक्षेप करेगी। ये ऐसे कारण हैं जिनसे हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि 1979 की निर्वाचक नामावली दूषित नहीं थी और इसे अविधिमान्य मानकर चुनौती नहीं दी जा सकती।

13. दो अन्य संक्षिप्त दलीलों की अब अवेक्षा की जा सकती है। अंतरित मामला संख्या 364/84 में यह प्रार्थना की गई कि निर्वाचक

---

[1] [1985] 4 उम० नि० प० 1206=ए० आई० आर० 1985 एस० सी० 1233.

[2] [1952] एस० सी० आर० 218.

नामावलियों का जिनके आधार पर असम में निर्वाचन आयोजित किये जायेंगे 1950 के अधिनियम की धारा 21(2)(क) द्वारा यथाअपेक्षित रूप में इन निर्वाचनों के आयोजन से पूर्व पुनरीक्षण किया जाना चाहिए। इससे अभिप्राय है व्यापक पुनरीक्षण। निर्वाचन आयोग की ओर से हाजिर होते हुए काउन्सेल ने न्यायालय के समक्ष निम्न कथन किया—

> "आयोग अधिनियम और नियमों के अनुसरण में असम के समस्त निर्वाचन क्षेत्रों के लिए निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण करेगा और इस प्रकार का पुनरीक्षण, यावत्साध्य, व्यापक पुनरीक्षण होगा और जब कभी भी किसी निर्वाचन क्षेत्र या निर्वाचन क्षेत्रों में व्यापक पुनरीक्षण करना संभव न हो, तो पुनरीक्षण संक्षिप्त या विशेष होगा।"

हमने अपने 28 सितम्बर, 1984 के आदेश में यह उपदर्शित किया कि निर्वाचन आयोग की ओर से किये गये कथन को ऐसी स्थिति में समस्त अर्जीदारों की आशंका को दूर कर देना चाहिए क्योंकि इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि असम में निर्वाचन आयोजित किये जाने से पूर्व निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण कथन में उपदर्शित रीति में होगा। निर्वाचन पत्र के संदर्भ में काफी बहस की गई। जैसा कि प्रतीत होता है कि निर्वाचन आयोग ने निर्वाचक रजिस्ट्रीकरण नियमों के नियम 8 के साथ पठित प्ररूप 4 में विहित रीति से भिन्न रीति अपनाई। पुनः आयोग की ओर से निम्न कथन किया गया—

> "अत्यधिक स्पष्टता को देखते हुए और लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 2(ग) के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए तथा निर्वाचक रजिस्ट्रीकरण नियम, 1960 के प्ररूप 4 के प्रकाश में "नागरिक" शब्द "निर्वाचक" शब्द के लिए प्रतिस्थापित किया जायेगा जब कभी भी यह निर्वाचन आयोग द्वारा जारी किये गये निदेश द्वारा निर्वाचन पत्र में आये।"

कथन में उपदर्शित विधि के अपनाये जाने से, इस कारण किये गये आक्षेप को समाप्त हुआ समझा जाना चाहिए।

14. निर्वाचक नामावलियों के पुनरीक्षण करने की बाबत भी काफी बहस की गई। अर्जीदार यह चाहते थे कि निर्वाचन आयोग स्वप्रेरणा से ऐसा करे जबकि निर्वाचन आयोग ने कार्य की अत्यधिक मात्रा और परिधि को ध्यान में रखते हुए अपनी असमर्थता प्रकट की और यह अभिवाक् किया कि

दावे या आक्षेप के आधार पर पुनरीक्षण किया जाये। इस प्रश्न पर विचार करते हुए और काउन्सेल की सविस्तार सुनवाई करने के पश्चात् हमने यह कथन किया—

"एकमात्र निदेश जो हम निर्वाचन आयोग को दे सकते हैं वह लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 और निर्वाचक रजिस्ट्रीकरण नियम, 1960 में विहित प्रक्रिया के अनुसरण में निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण किया जाना। किंतु चूंकि निर्वाचन आयोग ने हमारे समक्ष यह कथन किया कि वह निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण करेगा और यह पुनरीक्षण, यावत्साध्य, व्यापक होगा और जहां ऐसा करना साध्य न हो, वहां यह संक्षिप्त या विशेष होगा। इससे अधिक हम निर्वाचन आयोग को और कोई निदेश देना आवश्यक नहीं समझते। जब निर्वाचन आयोग द्वारा किए गए ऐसे पुनरीक्षण के परिणामस्वरूप निर्वाचक नामावलियों का प्रारूप तैयार हो जाये, तो ऐसा व्यक्ति जिसका नाम निर्वाचक नामावलियों के प्रारूप में सम्मिलित नहीं किया गया है इस आधार पर अपना नाम सम्मिलित किये जाने के लिए दावा कर सकेगा कि वह पात्र निर्वाचक है और यदि किसी व्यक्ति का नाम निर्वाचक नामावलियों के प्रारूप में गलती से सम्मिलित कर लिया गया है, जबकि वह भारत का नागरिक नहीं है, तो किसी भी व्यक्ति को निर्वाचक रजिस्ट्रीकरण नियम, 1960 के अनुसरण में आक्षेप फाइल करके निर्वाचक नामावलियों के प्रारूप में ऐसे व्यक्ति का नाम सम्मिलित किये जाने को चुनौती देकर आक्षेप करने का उतना ही हक होगा। हमारे लिए यह अधिकथित करना कि ऐसे किसी दावे अथवा निर्वाचन आयोग के समक्ष फाइल किये गये आक्षेपों को सिद्ध करने के प्रयोजनार्थ सबूत की मात्रा क्या होनी चाहिए न तो वांछनीय और न ही उचित होगा। आक्षेपकर्ता तथा ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा पेश की गई सामग्री के प्रकाश में, जिसका नाम निर्वाचक नामावलियों से निकाला जाना ईप्सित है तथा ऐसी अन्य सामग्री के आधार पर जो पूर्ववर्ती वर्षों की निर्वाचक नामावलियों को सम्मिलित करते हुए उसके समक्ष उपलब्ध कराई जाये, इस बात पर कि क्या ऐसा व्यक्ति नागरिक है अथवा नहीं विचार करने और इसका विनिश्चय करने का अधिकार समुचित निर्वाचक अधिकारी को होगा। हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि समुचित निर्वाचक अधिकारी स्वयं अपनी ओर से भी, यदि वह पूर्ववर्ती वर्षों की निर्वाचक नामावलियों

1985(9) eILR(PAT) SC 1

को सम्मिलित करते हुए अपने समक्ष पेश सामग्री के आधार पर, किसी संदेह का कारण रखता है, तो ऐसे किसी व्यक्ति की नागरिकता की बाबत स्वयं का समाधान करने के लिए कार्यवाही कर सकता है जिसका नाम सम्मिलित किया जाना ईप्सित है या निर्वाचक नामावलियों में सम्मिलित कर लिया गया है।"

15. हम समाधानप्रद रूप में इस बात की अपेक्षा करते हैं कि असम समझौता होने से आन्दोलन समाप्त हो गया प्रतीत होता है। निर्वाचन आयोग ने कार्य करना शुरू कर दिया है और अधिनियम तथा नियमों के उपबंधों का अनुपालन करते हुए, निर्वाचक नामावलियों का पुनरीक्षण किया जा रहा है। हमें यह आशा और विश्वास है कि निर्वाचन, जो कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया के लिए अनिवार्य है, यावत्-समीचीन रूप में विधि के अनुसरण में और निर्वाचन आयोग द्वारा न्यायालय के समक्ष किये गये कथन के निबन्धनों के अनुसार पुनरीक्षित निर्वाचक नामावली के आधार पर आयोजित किये जायेंगे।

तद्नुसार अर्जी का निपटारा किया गया।

मदन/चन्द